

सोशल मीडिया का समाज पर प्रभाव – एक सैद्धांतिक विश्लेषण (Impact of Social Media on Society – A Theoretical Analysis)

राजेश्वर कुमार, भवतोष पाण्डेय

<https://doi.org/10.61410/had.v21i2.296>

शोध सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध प्रपत्र समकालीन समाज पर सोशल मीडिया के बहुआयामी प्रभावों का एक समाज वैज्ञानिक सैद्धांतिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। तीव्र सूचना क्रांति के इस युग में सोशल मीडिया मात्र संचार का माध्यम न रहकर एक 'आभासी सामाजिक संरचना' (Virtual Social Structure) के रूप में उभरा है तथा तीव्रता के साथ स्थापित भी होता जा रहा है। यह शोध मुख्य रूप से जे.एच. मीड एवं ब्लूमर के प्रतीकात्मक अन्तः क्रियावाद, चार्ल्स कूले के 'आत्म दर्पण का सिद्धांत', मैनुअल कास्टेल्स का 'नेटवर्क सोसायटी का सिद्धांत', मिशेल फूको का 'शक्ति और ज्ञान की मीमांसा', जाक डेरिडा का 'विखंडनवाद का सिद्धांत', इरविन गॉफमैन के 'नाट्यशास्त्र', जर्गन हेबरमास का 'पब्लिक स्फीयर', जया बोद्रिया का 'अति यथार्थता एवं 'सिमुलेशन' तथा 'डिजिटल नारीवाद' सिद्धांतों के आलोक में पहचान निर्माण (Identity Construction), अन्तःक्रिया का स्वरूप, संबंधों का अस्थायी स्वरूप और डिजिटल सक्रियता (Digital Activism) का समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में परीक्षण करने का एक प्रयास है।

इस प्रपत्र के अंतर्गत इस तथ्य का विश्लेषण किया गया है कि वर्तमान में सोशल मीडिया किस प्रकार 'प्रतीकात्मक अन्तःक्रियावाद' के माध्यम से व्यक्ति की आत्म-छवि और सामाजिक संबंधों को पुनर्गठित कर रहा है। सोशल मीडिया के इस युग में यदि कोई घटना सोशल मीडिया पर पोस्ट नहीं हुई, तो आधुनिक चेतना मानती है कि जैसे वह घटना सचमुच घटित ही नहीं हुई है। 'डिजिटल नारीवाद' (Digital Feminism) के संदर्भ में यह स्पष्ट करता है कि कैसे इंटरनेट ने पारंपरिक पितृसत्तात्मक सीमाओं को चुनौती देकर महिलाओं के लिए सशक्तिकरण के नए द्वार खोले हैं। साथ ही, तकनीक किस प्रकार सामाजिक पूंजी की अवधारणा को परिवर्तित करने में सहायक है। अंततः, यह शोध 'डिजिटल डिवाइड' और ऑनलाइन सुरक्षा जैसी चुनौतियों को रेखांकित करते हुए एक समावेशी डिजिटल साक्षरता की आवश्यकता पर बल देता है।

कुंजी शब्द (Keywords)

सोशल मीडिया, पहचान निर्माण, डिजिटल नारीवाद, सामाजिक पूंजी, डिजिटल सक्रियता, नेटवर्क सोसाइटी, पब्लिक स्फीयर

प्रस्तावना (Introduction)

21वीं सदी में इंटरनेट के पीढ़ीगत विकास आधारित सूचना क्रांति ने समाज की परंपरागत संरचना को पूरी तरह से झकझोर कर रख दिया है। उसका उपोत्पाद सोशल मीडिया अब केवल संचार का साधन नहीं, बल्कि एक 'आभासी समाज' (Virtual Society) बन चुका है। इसने समाज की परंपरागत संरचना को गंभीर और व्यापक रूप से प्रभावित करते हुए प्रभावकारी सामाजिक परिवर्तन को समावेशित करने का विशद कार्य किया है। इंटरनेट आधारित आभासी समाज में सामाजिक संबंध और अन्तः क्रिया का स्वरूप भी आभासी ही होता है जो कि वर्चुअल प्लेटफार्म पर फालोवर्स की संख्या, लाईक व अनलाईक आदि वर्चुअल गतिविधियों से बनता और बिगड़ता है। यह शोध पत्र इस बात का विश्लेषण करता है कि कैसे सोशल

- असिस्टेंट प्रोफेसर- समाजशास्त्र एवं कार्यवाहक प्राचार्य, शहीद मंगल पाण्डेय राजकीय महिला महाविद्यालय, बलिया, उ०प्र०
- समाजशास्त्रीय अध्ययता, आनन्द नगर, बलिया, उ०प्र०

मीडिया वास्तविक समाज के समानांतर सामाजिक संबंधों, पहचान और सामूहिक व्यवहार को तीव्रगामी रूप से प्रभावित कर रहा है तथा आभासी संबंधों की प्रभाविकता सामाजिक संरचना की केन्द्रीयता में शामिल एवं स्थापित हो चुका है।

अध्ययन का उद्देश्य (Objectives of the study)

प्रस्तुत शोध पत्र में आधुनिक समाज में सोशल मीडिया के तीव्र और व्यापक प्रभावशीलता का परीक्षण समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के माध्यम से करने का प्रयास किया गया है ताकि समाज पर सोशल मीडिया के गहन प्रभाव की सैद्धांतिकी को समझा जा सके। करते हुए प्रभावकारी सामाजिक परिवर्तन को समावेशित करने का विशद कार्य किया है। इंटरनेट आधारित आभासी समाज में सामाजिक संबंध और अंतःक्रिया का स्वरूप भी आभासी ही होता है जो कि वर्चुअल प्लेटफॉर्म पर फालोवर्स की संख्या, लाईक व अनलाईक आदि वर्चुअल गतिविधियों से बनता और बिगड़ता है। यह शोध पत्र इस बात का विश्लेषण करता है कि कैसे सोशल मीडिया वास्तविक समाज के समानांतर सामाजिक संबंधों, पहचान और सामूहिक व्यवहार को तीव्रगामी रूप से प्रभावित कर रहा है तथा आभासी संबंधों की प्रभाविकता सामाजिक संरचना की केन्द्रीयता में शामिल एवं स्थापित हो चुका है।

अध्ययन का उद्देश्य (Objectives of the study)

प्रस्तुत शोध पत्र में आधुनिक समाज में सोशल मीडिया के तीव्र और व्यापक प्रभावशीलता का परीक्षण समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के माध्यम से करने का प्रयास किया गया है ताकि समाज पर सोशल मीडिया के गहन प्रभाव की सैद्धांतिकी को समझा जा सके।

विधि तंत्र (Methodology)

प्रस्तुत शोध अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों का विवेचनात्मक सैद्धांतिक विश्लेषण करते हुए अध्ययन को पूर्णता प्रदान की गयी है।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य (Theoretical Perspectives)

सोशल मीडिया के तीव्र सामाजिक प्रभाव को समझने के लिए समाजशास्त्र के कुछ प्रमुख सिद्धांतों का सहारा लिया जा सकता है -

जे. एच. मीड और हर्बर्ट ब्लूमर द्वारा विकसित प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद (Symbolic Interactionism) का सिद्धांत यह मानता है कि समाज प्रतीकों और उनके अर्थों के माध्यम से बनता व संचालित होता है। इस कारण मानव समाज को एक स्थापित या स्थिर संरचना के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि इसे क्रियाशील लोगों की चल रही अंतःक्रियात्मक प्रक्रिया (Ongoing Process) के रूप में देखा जाना चाहिए (Blumer, 1969)। अर्थात् समाज कोई स्थिर या बंधी-बंधायी संरचना नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है जो इंसानों के आपसी संवाद, इशारों और उनके अर्थों पर टिकी हुई है। समाज संस्थाओं से नहीं, बल्कि लोगों के बीच होने वाली रोजमर्रा की बातचीत व अन्तःक्रिया और उनके द्वारा प्रतीकों को दिए जाने वाले अर्थों से बनता व संचालित होता है।

सोशल मीडिया पर 'Likes', 'Emojis', और 'Status' नए सामाजिक प्रतीक बनकर उभरें हैं। व्यक्ति अपनी पहचान को इन प्रतीकों के माध्यम से गढ़ता और व्यक्त करता है। सोशल मीडिया की आभासी दुनिया में विकसित होकर ट्रेंड करने वाले प्रतीकों को इंटरनेट के माध्यम से प्रसारित होने का असीमित स्कोप एवं अवसर प्राप्त होता है।

अमेरिकन समाजशास्त्री चार्ल्स कोली ने अपने 'आत्म दर्पण के सिद्धांत' (Looking Glass Self) में बताया है कि व्यक्ति समाज रूपी आईने में अपनी छवि देखता है और उसी के आधार पर अपने 'स्व' (Self) या अपनी पहचान का निर्माण करता है। व्यक्ति अपने बारे में जो कुछ भी सोचता है, वह उसकी खुद की मौलिक सोच नहीं होती, बल्कि दूसरों की उसके प्रति राय का परिणाम होती है। सोशल मीडिया पर लोग दूसरों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर अपनी आत्म-छवि बनाते हैं। व्यक्ति दूसरों की वास्तविक राय से नहीं, बल्कि दूसरों की राय के बारे में अपने अनुमान (हम क्या सोचते हैं कि वे हमारे बारे में क्या सोच रहे हैं) से प्रभावित होते हैं। इसलिए, कई बार इसमें गलतफहमी या भ्रम भी हो सकता है। हर व्यक्ति दूसरे के लिए एक दर्पण की तरह है, जो सामने से गुजरने वाले की छवि को प्रतिबिंबित करता है (Cooley, 1902)।

मैनुअल कास्टेल्ल्स (Manuel Castells) के नेटवर्क सोसाइटी का सिद्धांत (Theory of Network Society) के अनुसार, आधुनिक समाज सूचना के नेटवर्क पर आधारित एवं निर्मित है। सोशल मीडिया ने भौ-गोलिक सीमाओं को समाप्त कर दिया है। अब सामाजिक पूंजी (Social Capital) केवल भौतिक संबंधों तक सीमित नहीं है, बल्कि 'डिजिटल संपर्क' पर आधारित हो गया है। सोशल मीडिया ने मनुष्य को एक ऐसी 'अभूतपूर्व संचार शक्ति' दी है, जिसने सामाजिक पूंजी के पुराने स्वरूप (भौतिक रूप से आने-सामने के संबंध) को बदलकर 'डिजिटल नेटवर्किंग' में तब्दील कर दिया है। यह नई सामाजिक पूंजी समाज को लोकतांत्रिक बनाने और जनता को अधिकार संपन्न बनाने का एक सशक्त जरिया बन रहा है। इंटरनेट के दौर में 'समुदाय' (Community) की परिभाषा बदल गई है। अब समुदाय का आधार 'स्थान' (Place) नहीं, बल्कि 'नेटवर्क' (Network) है (Castells, M., 2001)।

जर्मन समाजशास्त्री जर्गन हेबरमास के अनुसार पब्लिक स्फीयर समाज में एक ऐसा स्थान - जैसे 18वीं सदी के कॉफी हाउस, सैलून आदि - रहा है जहाँ नागरिक स्वतंत्र रूप से इकट्ठा होकर, बिना किसी सरकारी या व्यावसायिक दबाव के सार्वजनिक हितों के मुद्दों पर तार्किक व आलोचनात्मक बहस (Rational-Critical Debate) करते हैं (Habermas, 1989)। आज के डिजिटल युग में, सोशल मीडिया - एक्स, फेसबुक, यूट्यूब, रेडिट आदि को एक नए 'डिजिटल पब्लिक स्फीयर' के रूप में देखा जा सकता है।

सोशल मीडिया ने पारंपरिक पब्लिक स्फीयर की कई सीमाओं को तोड़कर इसे अधिक लोकतांत्रिक और सुलभ बनाया है। इसने जाति, वर्ग, लिंग और भूगोल की दीवारों को गिराकर हर उस व्यक्ति को मंच दिया है जिसके पास इंटरनेट है। सोशल मीडिया पर नागरिक सीधे अपनी बात रख सकते हैं, जिससे जन-आंदोलनों - जैसे #MeToo, किसान आंदोलन, अरब स्प्रिंग की प्रघटना आदि -को वैश्विक पहचान मिली। रेडिट या एक्स (X) जैसे मंचों पर विभिन्न नीतिगत निर्णयों, कानूनों और सामाजिक मुद्दों पर नागरिक आपस में सीधे संवाद और बहस करते हैं, जो हेबरमास के 'तार्किक संवाद' के करीब और उसी की तरह का दिखता है।

हेबरमास ने खुद 20वीं सदी में मास मीडिया - टीवी, विज्ञापन - के कारण पब्लिक स्फीयर के पतन की बात कही थी जो अब सोशल मीडिया पर अधिक विकृत स्वरूप में दिखाई देने लगा है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के एल्गो रिडम उपयोगकर्ता को वही सामग्री दिखाते हैं जो उन्हें पसंद है। इसके कारण लोग अलग-अलग वैचारिक गुटों में बंट जाते हैं। यहाँ 'तार्किक बहस' के बजाय केवल अपने जैसे विचारों को सुनने और असहमति को खारिज करने की प्रवृत्ति प्रभावी होती जाती है, जिससे साझा पब्लिक स्फीयर और वास्तविक विमर्श खंडित होता जाता है। हेबरमास का मानना था कि पब्लिक स्फीयर पूंजी और बाजार के प्रभाव से मुक्त होना चाहिए। लेकिन आज के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म की शीर्ष प्राथमिकता 'यूजर एंगेजमेंट' और 'विज्ञापन' से

मुनाफा कमाना है। यहाँ विचार एक 'उत्पाद' (Commodity) बन गए हैं और सनसनीखेज खबरों को गंभीर बहसों से ज्यादा तवज्जो मिलने लगा है। सोशल मीडिया पर संवाद कई बार तार्किक होने के बजाय भावनात्मक, आक्रामक, विकृत और ट्रोलिंग से भरा होता है। फेक न्यूज और डीपफेक आदि के कारण समाज के लिए हितकर विमर्श की जगह प्रोपेगैंडा ले लेता है। साथ ही, आधुनिक डिजिटल दुनिया पूरी तरह स्वतंत्र भी नहीं है। कॉर्पोरेट कंपनियों द्वारा डेटा की निगरानी और सरकारों द्वारा सेंसरशिप के कारण नागरिकों की खुलकर बोलने की आज़ादी प्रभावित हो रही है। एक न्यायिक वाद में टेलीग्राम चैनल को केंद्र सरकार ने 'डार्क वेब, अपराधियों और टेररिस्ट' का पसंदीदा प्लेटफॉर्म बताया। पेपर लीक के कारण निरस्त नीट की दोबारा परीक्षा की निष्पक्षता और विश्वसनीयता बनाए रखने के दृष्टिगत इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 69ए के तहत आदेश जारी कर जून 2026 में एक निश्चित अवधि के लिए भारत में टेलीग्राम प्लेटफॉर्म पर बैन लगा दिया गया। इसके पक्ष में सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता का कहना था कि 'बड़े पैमाने पर ग़लत जानकारी फैलाने के मामले में टेलीग्राम का बॉट आर्किटेक्चर इसे ख़ास तौर पर संवेदनशील बनाता है।' (बीबीसी हिंदी, 19 जून 2026)।

मिशेल फूको (Michel Foucault) के 'पैनऑप्टिकॉन' (Panopticon) सिद्धांत के दृष्टिकोण से देखा जाए तो सोशल मीडिया पर व्यक्ति हमेशा 'निगरानी' में होता है। डेटा एल्गोरिदम व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित और प्रभावित करते हैं, जिससे समाज में एक अदृश्य शक्ति संरचना (Power Structure) विकसित होती है। इस संरचना में जिसके पास ज्ञान (डेटा, सूचना, विमर्श रचने की क्षमता) है, उसी के पास शक्ति है। जो शक्तिशाली है, वह अपने अनुकूल ज्ञान की रचना करता है ता कि उसकी शक्ति को नैतिक और स्वाभाविक माना जा सके (दोषी, 2006)।

फ्रांसीसी दार्शनिक जाक डेरिडा (Jacques Derrida) के विखंडनवाद सिद्धांत (Deconstruction Theory) के परिप्रेक्ष्यानुसार सोशल मीडिया समाज को कोई एक निश्चित दिशा (पूरी तरह सकारात्मक या पूरी तरह नकारात्मक) नहीं दे रहा है। यह सामाजिक संबंधों, पहचान और सत्य की पारंपरिक परिभाषाओं को ही 'विखंडित' (Deconstruct) कर रहा है। यह एक ऐसा 'पाठ' (Text) है जिसे जितनी बार पढ़ा (या इस्तेमाल किया) जाएगा, इसके उतने ही विरोधाभासी सामाजिक प्रभाव सामने आएंगे। पहले 'वास्तविक जीवन' को सत्य और 'आभासी जीवन' को केवल एक भ्रम माना जाता था। आज सोशल मीडिया या आभासी दुनिया में मिलने वाला ट्रोलिंग, अवसाद एवं वायरल ट्रेंड्स का प्रभाव व्यक्ति के वास्तविक जीवन और मानसिक स्वास्थ्य पर पूरी तरह वास्तविक होता है। अब यह तय करना मुश्किल है कि वास्तविक क्या है और आभासी क्या है? व्यक्ति अपने शयनकक्ष का वीडियो एवं रील्स तथा व्यक्तिगत भावनाएं सार्वजनिक सोशल मीडिया मंच पर साझा कर रहे हैं। सार्वजनिक स्थान अब निजी अनुभवों से और निजी स्थान सार्वजनिक विमर्श से आच्छादित हो गए हैं।

सोशल मीडिया एक तरफ जहाँ हाशिए के लोगों को मंच देता है, वहीं दूसरी तरफ इसके पीछे काम करने वाले तकनीकी एल्गोरिदम, सरकारी एवं कॉर्पोरेट नियंत्रण और वैचारिक कट्टरता व नए प्रकार के आभासी व मानसिक नियंत्रण को जन्म देते हैं। इस प्रकार, जो माध्यम मुक्ति का साधन दिखता है, वही माध्यम अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण का सबसे बड़ा औजार बन जाता है।

फ्रांसीसी दार्शनिक और समाजशास्त्री ज्यॉन् बोद्रीया (Jean Baudrillard) का 'अति-यथार्थवाद' (Hyperreality) और सिमुलेशन (Simulation) का सिद्धांत सोशल मीडिया के सामाजिक प्रभाव को समझने के लिए सटीक विश्लेषण प्रदान करता है। बोद्रीया का मानना था कि उत्तर-आधुनिक समाज में संकेतों, छवियों (Images) और प्रतीकों की बाढ़ आ गई है। ये छवियाँ इतनी शक्तिशाली हो गई हैं कि इन्होंने वास्तविक यथार्थ (Original Reality) को ही प्रतिस्थापित (Replace) कर दिया

है। जब 'आभासी यथार्थ' वास्तविक यथार्थ से भी अधिक सुंदर, आकर्षक और सच्चा लगने लगे, तो उसी स्थिति को बोद्रिया 'हाइपर-रियलिटी' कहते हैं (रावत, 2005)।

ज्यां बोद्रिया के 'सिमुलाक्रा' (Simulacra) अवधारणा का अर्थ है - ऐसी नकल या प्रतिलिपि (Copy) जिसका समाज में कोई मूल (Original) अस्तित्व मौजूद ही न हो। इंस्टाग्राम या स्नेपचैट जैसे जैसे सोशल मीडिया एप के फिल्टर्स और टूल्स के द्वारा कोई व्यक्ति स्व रचित व परिवर्तित अपनी तस्वीर पोस्ट करता है, जो कि किसी वास्तविक चेहरे की नकल नहीं होती, बल्कि एक ऐसी 'अति-यथार्थ' छवि होती है जो वास्तव में (भौतिक दुनिया में) अस्तित्व में ही नहीं है। धीरे-धीरे लोग उस 'सिमुलाक्रा' (फिल्टर वाले चेहरे) को ही सच मानने लगते हैं और वास्तविक चेहरा उन्हें अधूरा या कमतर लगने लगता है। यहाँ नकल ने असल को प्रतिस्थापित करने का कार्य किया है।

अति – यथार्थवाद की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब डिजिटल दुनिया का अनुभव भौतिक व वास्तविक दुनिया के अनुभव से अधिक गहरा और प्रभावी हो जाता है। लोग किसी खूबसूरत पर्यटन स्थल, होटल या शादी में जाते हैं, तो उनका मुख्य उद्देश्य उस पल को जीना नहीं होता, बल्कि उसकी रील्स और तस्वीरें बनाकर सोशल मीडिया पर प्रदर्शित करना या पोस्ट करना - हाइपर रियलिटी - होता है। यह चलन इस हद तक गतिमान हो गया है कि यदि कोई घटना सोशल मीडिया पर पोस्ट नहीं हुई, तो सोशल मीडिया के युग में आधुनिक चेतना यह मानती है कि जैसे वह घटना वास्तव में घटी ही नहीं। वास्तविक जीवन का आनंद अब इस बात पर निर्भर करता है कि उसे सोशल मीडिया पर कितने लाइक्स और कमेंट्स मिले। डिजिटल अनुभव, वास्तविक अनुभव से वृहत्तर हो गया है।

सोशल मीडिया पर हर कोई अपने जीवन के केवल सबसे अच्छे व बेहतरीन, सुखी और सजावटी पलों को ही प्रदर्शित करता है। इन्फ्लुएंसर्स और दोस्तों की 'परफेक्ट लाइफ', 'परफेक्ट हॉलिडे' और 'परफेक्ट रिलेशनशिप' की प्रदर्शित छवियाँ एक अति – यथार्थवादी दुनिया रचती हैं। आम व्यक्ति यह भूल जाता है कि यह केवल एक चुनिंदा रचित सिमुलेशन (सजाया गया भ्रम) है। वह इस अति-यथार्थ की तुलना अपने साधारण, संघर्षपूर्ण और वास्तविक जीवन से करने लगता है, जिससे उनके अंदर अवसाद (Depression), अकेलापन और हीनभावना (FOMO – Fear of Missing Out) का सामाजिक प्रभाव व्युत्पन्न होता है। यह पारिवारिक कलह एवं अन्य कई समस्याओं का भी महत्वपूर्ण कारण बन रहा है।

बोद्रिया के शब्दों में बात की जाए तो इंटरनेट युग में सूचनाओं की बाढ़ ने किसी घटना के वास्तविक अर्थ को समाप्त कर दिया है। मीडिया और सोशल मीडिया अब वास्तविक घटनाओं को दिखाने के बजाय 'घटनाओं का प्रायोजित विमर्श' रचते हैं। राजनीतिक दलों के आईटी सेल और ट्रोल आर्मी द्वारा डीपफेक (Deepfake) वीडियो के जरिए अपने अनुरूप तथा अपने विरोधियों के विरुद्ध एक नैरेटिव या 'आभासी सत्य' गढ़ने का कार्य किया जाता है। सोशल मीडिया पर चल रहा राजनीतिक युद्ध अक्सर वास्तविक जमीनी मुद्दों से कटा होता है। ट्रेंड कर रहे हैशटैग्स और वायरल वीडियो समाज में एक ऐसा राजनीतिक 'अति-यथार्थवाद' की रचना करते हैं, जिससे प्रभावित होकर लोग वास्तविक दुनिया में मतदान करते हैं या दंगे कर बैठते हैं। यहाँ नकली नैरेटिव ही वास्तविक राजनीति का दशा और दिशा का निर्धारण करने लगता है।

सोशल मीडिया के युग में लोग एक ऐसे युग में जी रहे हैं जहाँ सोशल मीडिया के द्वारा 'यथार्थ' का अपहरण किया जा चुका है। सोशल मीडिया कोई ऐसा दर्पण नहीं है जो समाज के सच को दिखाता हो, बल्कि यह खुद में एक ऐसी अति-यथार्थ रचित दुनिया है, जिसने समाज के लोगों को इस कदर घेर लिया है कि अब उनके लिए स्क्रीन के बाहर की दुनिया उदास और नीरस लगने लगी है।

कनाडाई-अमेरिकी समाजशास्त्री इर्विंग गॉफमैन (Erving Goffman) ने अपनी पुस्तक 'The Presentation of Self in Everyday Life' (1959) में कहा था कि सामाजिक जीवन एक थिएटर (रंगमंच) की तरह है, जहाँ हम सभी अभिनेता (Actors) हैं और अपने आस-पास के लोगों – दर्शकों / श्रोताओं के सामने अपनी एक खास छवि पेश करने के लिए 'अभिनय' कर रहे हैं। सोशल मीडिया प्रोफाइल - फेसबुक, इंस्टाग्राम, लिंकडइन आदि - हमारा 'फ्रंट स्टेज' है। यहाँ हम अपनी सबसे अच्छी तस्वीरें, अपनी सफलताएं, महंगे होटलों की में व्यतीत समय और खुशहाल पारिवारिक लम्हों को पोस्ट करते हैं। यह एक सोची-समझी स्वरचित प्रस्तुति व प्रदर्शन है ताकि लोग हमें सफल, खुश और बुद्धिमान समझें। इसके पृष्ठभूमि (Back Stage) में व्यक्ति का वास्तविक, रोजमर्रा का समानांतर जीवन - जहाँ वह बिखरे बालों में बैठा होता है, आर्थिक या मानसिक तनाव से जूझ रहा होता है, या साधारण से घर में रह रहा होता है - चल रहा होता है। सोशल मीडिया की सबसे बड़ी समस्या यह है कि लोग दूसरों के 'फ्रंट स्टेज' (स्वरचित व प्रदर्शित प्रोफाइल) की तुलना अपने खुद के 'बैक स्टेज' (वास्तविक जीवन की सच्चाई व संघर्ष) से करने लगते हैं, जिससे सामाजिक हीनभावना बढ़ती है।

सोशल मीडिया पर क्या पोस्ट कर रहे हैं, कौन सा हैशटैग लगा रहे हैं और किस तरह के विमर्श का हिस्सा बन रहे हैं - यह सब 'प्रभाव प्रबंधन' का हिस्सा है। यहाँ तक कि किसी पोस्ट को डालने के बाद उसे बार-बार देखना कि कितने लाइक्स मिले या मनपसंद लाइक्स न मिलने पर पोस्ट को डिलीट कर देना, गॉफमैन के अनुसार प्रभाव प्रबंधन का आधुनिक रूप है। आभासी दुनिया में लोग अपनी डिजिटल पहचान को बहुत सावधानी से 'एडिट' और 'क्यूरेट' करते रहते हैं।

सोशल मीडिया पर लोगों की प्राथमिकताएं बदल गयी हैं। ब्रांडेड कपड़े, महंगी कार, दिखावे वाली जीवनशैली, हाथ में आईफोन या किसी बड़े स्तर का पुरस्कार व प्रमाणपत्र - यह सब वे 'प्रॉप्स' हैं जिनका उपयोग लोग रीलस और तस्वीरों में अपनी डिजिटल दुनिया की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को प्रभावशाली बनाने के लिए करते हैं। सोशल मीडिया पर 'लाइक के लिए लाइक' या 'कमेंट्स के लिए कमेंट्स' की संस्कृति इसका जीवंत उदाहरण है। दोस्त एक -दूसरे की पोस्ट पर "Looking Gorgeous" या "Congratulations" एक चलन की तरह लिखकर एक -दूसरे के 'फ्रंट स्टेज' प्रदर्शन को बनाए रखने में मदद करते हैं। दर्शक यानी फालोवर्स भी लाइक्स और कमेंट्स के जरिए बताते हैं कि आपका अभिनय उन्हें पसंद आ रहा है या नहीं।

सोशल मीडिया पर 'कैंसल कल्चर' या किसी पुरानी विवादित पोस्ट का स्क्रीनशॉट एवं डिजिटल विवरण वायरल होते ही व्यक्ति के 'बैक स्टेज' का कोई वास्तविक सच (जैसे कोई स्कैंडल या गलत कार्य व व्यवहार) लीक होकर 'फ्रंट स्टेज' पर आ जाता है, उसकी स्वरचित डिजिटल सामाजिक पहचान तुरंत खंडित व तार-तार हो जाती है।

अगर बोदरिया कहते हैं कि सोशल मीडिया 'अति-यथार्थवादी दुनिया' (Hyperreality) है, तो गॉफमैन समझाते हैं कि यह दुनिया काम कैसे करती है। सोशल मीडिया ने हर आम इंसान को एक 24/7 घंटे चलने वाले वैश्विक रंगमंच पर खड़ा कर दिया है, जहाँ वह लगातार अपनी पहचान को प्रचारित व प्रसारित कर रहा है। सोशल मीडिया पर कोई भी व्यक्ति बिल्कुल वैसा नहीं दिखना चाहता, जैसा वह वास्तव में है। हर कोई वही भूमिका निभा रहा है जो वह दुनिया को दिखाना चाहता है।

डिजिटल नारीवाद और सशक्तिकरण के तहत, इंटरनेट ने पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना को चुनौती दी है और महिलाओं को एक "सुरक्षित" वर्चुअल स्पेस प्रदान करने का कार्य किया है। परंपरागत सार्वजनिक क्षेत्रों - चौपाल, बाजार आदि - पर पुरुषों का दबदबा रहा है। इंटरनेट ने महिलाओं को एक "सार्वजनिक स्पेस" दिया है जहाँ वे खुद को अभिव्यक्त कर सकती हैं और बिना किसी डर के आगे बढ़ सकती हैं। अगर वे अपनी पहचान छिपाना भी चाहती हैं, तो वे परिवर्तित डिस्प्ले पिकचर बनाकर या

अलग नाम का इस्तेमाल कर सकती हैं। इससे उनके लिए एक " सुरक्षित डिजिटल पब्लिक स्फीयर " बना है। नारीवाद का पुराना नारा, "पर्सनल इज पॉलिटिकल " सोशल मीडिया पर प्रभावी हो गया है। महिलाएं अपने व्यक्तिगत अनुभव -जैसे, घरेलू हिंसा, कार्यस्थल पर शोषण आदि - को भी शेयर कर रही हैं। जब हज़ारों महिलाएं एक जैसे अनुभव शेयर करती हैं , तो यह एक "सामूहिक प्रतिनिधान" का रूप ले लेता है। भारत और वैश्विक स्तर पर #MeToo आंदोलन रूपी डिजिटल सक्रियता नारीवादी सक्रियता का एक बेहतरीन उदाहरण रहा है। भारत में , इस आंदोलन ने दिखाया कि कैसे सोशल मीडिया ने न्याय के परंपरागत स्वरूप - जैसे पुलिस या कोर्ट - के समानांतर एक 'डिजिटल पंचायत' का निर्माण किया है। इसने शक्तिशाली क्षेत्रों - जैसे बॉलीवुड और पत्रकारिता आदि - में पितृसत्तात्मक दबदबे को चुनौती दी है, जहाँ पहले महिलाएं बोलने से डरती थीं। यह निजी दर्द को सार्वजनिक विरोध में बदलने का एक प्रक्रिया विकसित होने की तरह है। सोशल मीडिया महिलाओं को उनके परंपरागत भूमिका - जैसे, गृहिणी, माँ आदि - से आगे बढ़कर नई पहचान बनाने का अवसर व मंच प्रदान कर रहा है ।

सोशल मीडिया के प्रमुख सामाजिक प्रभाव (Major Social Impacts of Social Media)

1. **सामाजिक संबंधों का रूपांतरण एवं अजनबियों से संबंध:** सोशल मीडिया 'कमजोर संबंधों' – जैसे, अजनबियों से मित्रता- को बढ़ावा देता है, जिससे सूचना का प्रसार तो तेज़ गति से होता है, लेकिन भावनात्मक गहराई कमतर होता जात है। सामाजिक नेटवर्क में सूचना के प्रसार और नवीन विचारों के आदान-प्रदान में 'कमजोर संबंध' - अपरिचितों या दूर के संपर्कों - की भूमिका सबसे अहम होती है (Granovetter, 1973)।
2. **अकेलापन:** अपने विरोधाभासी स्वरूप के साथ जुड़ाव के कारण समाज के लोगों में 'डिजिटल अलगाव' बढ़ रहा है।
3. **पहचान निर्माण :** लोग सोशल मीडिया पर अपनी एक 'आदर्श और उन्नत छवि' प्रदर्शित करते हैं, जो वास्तविक जीवन से काफी भिन्न होती है। इससे तुलना की चलन विकसित होता है, जो मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
4. **सामाजिक आंदोलन और सक्रियता:** सोशल मीडिया ने 'लोकतान्त्रिक भागीदारी' को नया स्वरूप दिया है, उदाहरणस्वरूप - 'मी टू' आंदोलन, किसान आंदोलन आदि । यह हाशिए के समूहों और लोगों को अपनी आवाज़ उठाने का एक सबल मंच प्रदान करता है।

सोशल मीडिया की चुनौतियाँ (Challenges of social media) -

डिजिटल डिवाइड और ऑनलाइन उत्पीड़न: महिलाओं को खामोश रखने की कोशिश के तहत अक्सर 'साइबर बुलिंग' का सहारा लिया जाता है। यह महिलाओं के लिए डिजिटल क्षेत्र को असुरक्षित बनाता है।

ईको चैंबर: मशीनी एल्गोरिदम लोगों को डिजिटल स्क्रीन पर वही दिखाते हैं जो उन्हें पसंद आता है, जिससे वैचारिक कट्टरता बढ़ती है।

सोशल प्रूफ का दबाव: लोग स्वतंत्र निर्णय लेने के बजाय 'भीड़' के व्यवहार – लाइफ , ट्रेंड - का अनुसरण करते हैं।

डिजिटल सांस्कृतिक साम्राज्यवाद: सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर पश्चिमी संस्कृति एवं कृत्रिमता का प्रभुत्व बढ़ रहा है, जिससे स्थानीय लोक-संस्कृतियों का अस्तित्व प्रभावित हो रहा है।

पहुंच की कमी: ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुषों की तुलना में महिलाओं के पास स्मार्टफोन और इंटरनेट की पहुंच कम है। यह 'डिजिटल लैंगिक अंतराल' (Digital Gender Gap) सशक्तिकरण की राह में सबसे बड़ी बाधा है (PIB, 2025)।

मुख्य निष्कर्ष (Major Findings) - उपरोक्त सैद्धांतिक विश्लेषणों एवं सोशल मीडिया ट्रेन्ड्स के विश्लेषण से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. सोशल मीडिया अब एक “वर्चुअल समाज” में तब्दील हो गया है, जिसमें सामाजिक रिश्ते इस वर्चुअल प्लेटफॉर्म पर सक्रियता, जैसे लाइक्स, अनलाइक्स और फॉलोअर्स की संख्या से बनते और बिगड़ते हैं, न कि आमने-सामने की अन्तःक्रिया से।
2. समाज के सदस्य सोशल मीडिया पर सिर्फ अपनी सबसे अच्छी यादें, सफलताएँ और खुशी के पल दिखाते हैं तथा अपनी असली और तनाव भरी जिंदगी को छुपाने का प्रयास करते हैं।
3. सोशल मीडिया पर लोग दूसरों के प्रतिक्रिया - लाइक्स और कमेंट्स- के आधार पर अपनी सेल्फ-इमेज बनाते हैं।
4. सोशल मीडिया की वर्चुअल दुनिया इतनी आकर्षक हो गई है कि इसने वास्तविकता को स्थानापन्न कर दिया है। जिसे बौद्धिया “अति-वास्तविकता” कहते हैं। फोटोशॉप टूल्स से बनाए गए फिल्टर तस्वीर और चेहरे “सिमुलाक्रा” (ऐसी नकलें जिनका कोई असली वजूद नहीं होता) के उदाहरण हैं, जिन्हें लोग वास्तविक मानने लगते हैं। किसी प्रघटना या अनुभव को सोशल मीडिया पर पोस्ट करना, उसे अनुभव करने और जीने से ज्यादा जरूरी हो गया है।
5. सोशल मीडिया – एक्स, फेसबुक, रेडिट आदि - जाति, वर्ग, लिंग और अन्य परंपरागत कारकों की बाधाओं को समाप्त करने की ओर अग्रसर है। इसने एक नया डिजिटल सार्वजनिक क्षेत्र का निर्माण किया है, जिसने पारंपरिक विमर्श को और अधिक लोकतांत्रिक बना दिया है। इसके बावजूद, मशीनी एल्गोरिदम लोगों को समान विचारधारा वाले समूहों में विभाजित करते हैं। यहां, कॉर्पोरेट मुनाफाखोरी, ट्रोलिंग, फर्जी खबरें, प्रचार और डीपफेक की प्रघटना तर्कसंगत बहस की जगह ले रहे हैं।
6. इंटरनेट ने पारंपरिक पितृसत्तात्मक सीमाओं को चुनौती दी है और महिलाओं को एक सुरक्षित डिजिटल आभासी मंच प्रदान किया है। भारत में #MeToo आंदोलन और ग्रामीण महिलाओं की प्रभावशीलता इसके प्रमुख उदाहरण हैं। यहां महिलाएं अपनी व्यक्तिगत अनुभव साझा कर रहीं हैं। उनकी सामूहिक चेतना दिन व दिन प्रभावशाली होती जा रही है। यह तकनीकी प्लेटफार्म उनको न केवल उपभोक्ता बना रहा है बल्कि सामग्री निर्माता भी बना रहा है।
7. ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के पास पुरुषों की तुलना में स्मार्टफोन और इंटरनेट तक कम पहुंच है। यह ‘डिजिटल लिंग अंतर’ उनके सशक्तीकरण के लिए एक बड़ी बाधा सिद्ध हो रहा है।
8. सोशल मीडिया ‘कमज़ोर रिश्तों’ (अजनबियों से दोस्ती) को बढ़ावा देता है, जिससे जानकारी तेज़ी से फैलने की प्रवृत्ति होती है, लेकिन वास्तविक जिंदगी में तकनीकी अकेलापन बढ़ता है।
9. डेटा एल्गोरिदम के ज़रिए सोशल मीडिया पर सक्रिय लोग हमेशा कॉर्पोरेट कंपनियों और सरकारों की ‘निगरानी’ और नियंत्रण में रहते हैं।

उपसंहार (Conclusion)

सोशल मीडिया समाज के लिए एक 'दुधारी तलवार' की तरह है। एक ओर, जहाँ यह सूचना के लोकतंत्रीकरण और वैश्विक जुड़ाव का मार्ग प्रशस्त करता है, वहीं दूसरी ओर, यह सामाजिक विखंडन और निगरानी के नए खतरे को भी पैदा करता है। इंटरनेट के माध्यम से महिला सशक्तिकरण केवल 'तकनीकी' नहीं बल्कि एक 'सांस्कृतिक क्रांति' की तरह उभरा है। यह महिलाओं को केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि सामग्री निर्माता (Content Creator) और निर्णय लेने वाला बना रहा है। यह जहाँ एक तरफ हाशिए के लोगों और महिलाओं को सशक्त कर 'डिजिटल नेटवर्किंग' के रूप में नई सामाजिक पूंजी दे रहा है, वहीं दूसरी तरफ वैचारिक कट्टरता, मानसिक अवसाद, और निगरानी का नया तंत्र भी खड़ा कर रहा है। एक संतुलित समाज के लिए समावेशी डिजिटल साक्षरता और मशीनी एल्गोरिदम की पारदर्शिता बेहद अनिवार्य है।

संदर्भ सूची (References)

1. Cooley, C. H. (1902), *Human Nature and the Social Order*, Charles Scribner's Sons, New York.
2. Blumer, H. (1969), *Symbolic Interactionism: Perspective and Method*, Englewood Cliffs, New Jersey (USA).
3. Castells, M. (2001), *The Internet Galaxy: Reflections on the Internet, Business, and Society*, Oxford University Press
4. Habermas, J. (1989), *The Structural Transformation of the Public Sphere: An Inquiry into a Category of Bourgeois Society*, Translated by T. Burger and F. Lawrence. Cambridge, MA: MIT Press.
5. दोषी, एस.एल. (2006), *आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता और नव-समाजशास्त्रीय सिद्धांत*, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
6. रावत, हरिकृष्ण (2005), *उच्चतर समाजशास्त्र विश्वकोश*, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. *Results of Comprehensive Modular Survey: Telecom, 2025* (January – March, 2025), Ministry of Statistics and Programme Implementation, PIB, 29th May, 2025.
8. Granovetter, M. (1973), *The strength of weak ties*, American Journal of Sociology, 78(6), pp. 1360–1380.
9. Goffman, E. (1959), *The Presentation of Self in Everyday Life*, Doubleday/Anchor Books

डॉ० राजेश्वर कुमार, ईमेल . rajeshwarraj.1980@gmail.com
डॉ० भवतोष पाण्डेय